।। वेदान्त पीयूष ।।

मुख्य पृष्ठ | उपदेश सार | उपासना | सामान्य | मिशन समाचार

Postal Regd No : IDC/MP/966/2006-08 Indore मूल्य - रु १०/-, वर्ष -६ अंक-७५

आर.एन.आई. पंजीकरण संख्या - एम.पी/हिन्दी/२०००/१०६०६ अप्रैल-२००८

यदानन्दरूपं प्रकाशस्वरूपं निरस्तप्रपंचं परिच्छेदशून्यम्।
अहं ब्रह्मवृत्त्यैकगम्यं तुरीयं परं ब्रह्म नित्यं तदेवाहमस्मि।।

जो प्रकाश स्वरूप एवं आनंद स्वरूप है, जो समस्त प्रपंच का निषेध करने के उपरान्त समस्त परिच्छिन्नताओं से रहित ज्ञात होता है, वह तुरीय, नित्य, परब्रह्म मैं ही हूं। यह अपरोक्षानुभूति 'अहं ब्रह्मास्मि' वृत्ति के द्वारा ही ज्ञात होती है।

मोह का स्वरूप

समस्त शोक रूप संसार का कारण मोह ही होता है। यह मोह दो स्तर पर विद्यमान होता है। एक दृष्टा के बारे में तथा दूसरा दृश्य के बारे में, अर्थात् जीव और जगत के बारे में नासमझी उत्पन्न हुई है। दृष्टा के बारे में मोह का स्वरूप यह है कि अपने व्यक्तित्व को ही अपना यथार्थ समझ कर जीना। जो व्यक्त अस्मिता है वह ही हमारा सत्य है, उसको ही अपना रूप समझना। अपने बारे में यह दृढ़ मोह होने की वजह से ही बाह्य सुखादि की प्राप्ति के प्रयास होते हैं। अपने आपको व्यक्ति मानना ही इस प्रथम मोह का लक्षण है। व्यक्ति सदैव सापेक्ष ही होता है। अपने आप को व्यक्ति समझने के साथ ही सर्व प्रथम काल के दायरे में हमारा प्रवेश हो जाता है, क्योंकि अव्यक्त से व्यक्त होने की प्रक्रिया किसी काल पर निर्भर करती है। व्यक्त किसी नाम-रूपात्मक उपाधि को धारण करना है। सर्व प्रथम तो जिसे हम अपनी उपाधि की तरह जानते हैं, उनके परिवर्तन और विकार पर अपनी सुख-सुरक्षा, खुशियां आदि निर्भर हो जाती हैं। जहां अपनी इस व्यक्त अस्मिता को सत्य जाना तो उसकी समान सत्ता वाले इस व्यक्त जगत पर भी सत्यता का आरोपण होना स्वाभाविक ही होता है। इस तरह जो अपने आपको व्यक्ति समझता है, वह बाहर की दुनिया को सत्य समझता है, तथा अन्य सब को एक व्यक्ति की दृष्टि से ही देखता है। व्यक्तित्व का निर्माण ही अनात्मा को सत्य समझ कर होता है। व्यक्ति होने के उपरांत बाह्य चीज़ों की उपेक्षा नहीं कर सकते। अतः इस धरातल पर खड़े होकर प्रयास करते रहते हैं। इस प्रकार यह दो प्रकार के मोह है।

अर्जुन के जीवन में भी इस मोह का बहुत ही गहरा प्रभाव दिखाई दिया। इसके परिणाम स्वरूप वह शोक की गर्त में डूब गया था। वह एक ऐसे चक्रव्यूह में फंस गया था कि जहां धर्म-अधर्म के विषय में निर्णय नहीं कर पा रहा था। अपनी समस्त कर्तव्यता को त्याग दिया। इस प्रकार अपने बारे में मोह ही अन्य समस्त मोह के अस्तित्व को जन्म देता है एवं हम चक्रव्यूह में फंस जाते हैं। इससे निकलने के प्रयास भी जीवभाव के स्तर पर खड़े रहकर ही होते हैं। अपने बारे में यह जीवभाव की कल्पना ही समस्त समस्या का कारण बना हुआ है, अतः उसी धरातल पर रहते-रहते कभी भी समाधान नहीं हो सकता है। इस मूलभूत समस्या का समाधान जिसके माध्यम से होता है, वह ही वेदान्त है। जो अपनी समस्या के समाधान के लिए समस्त प्रयास कर चुका है, और जिसे अपनी समस्या के स्वरूप के बारे में भान हो गया है, वहां अब यह निश्चय कि हमारे इन प्रयासों से कोई समाधान नहीं, यह विश्वास ही ज्ञान के लिए प्रेरणा देता है। उससे प्रेरित होकर विरक्त होते हैं, तदुपरान्त अन्तर्मुख होकर चिंतन करते है। जो अंतर्मुख होकर ऐसे ज्ञानवान को ढूंढ़ता है, भगवत्कृपा से ऐसे ज्ञानवान के संनिधि प्राप्त होती है। उनके प्रति शरणागत जो होता है, वहीं पर संवाद की प्रक्रिया आरम्भ होती है। अर्जुन की प्रभु के प्रति शरणागति के कारण ही उसे श्रीमद् भगवद्गीता का दिव्य उपदेश प्राप्त हुआ और वह जीवभाव से परे जाने की इस संभावना रूप लक्ष्य से अवगत हुआ। उसके लिए साधन रूप धर्माचरण के लिए कृतसंकल्प हो गया।

सब घट मेरा सांइया, सूना घट नहीं कोय। जो घट प्रेम न संचरै, सो घट जान मसान।।

पिछले श्लोक में महर्षिजी ने बताया कि समस्त विषयपरक वृत्तियां अहंवृत्ति पर ही आश्रित हैं। अतः अहंवृत्ति ही मन है। अब अगले श्लोक में इस अहंवृत्ति के बारे में महर्षिजी आगे और बतााते है।

अहमयं कुतो भवति चिन्वतः।
अयि पतत्यहं निजविचारणम्॥ (19)

यह अहं कहां से आता है, इस मैं पर विचार करने पर एक आश्चर्यजनक तथ्य सामने आता है कि यह अहं ही गिर जाता है, अर्थात् उसका कोई मानो अस्तित्व ही नहीं रहता है।

उपदेश सार

'अहं वृत्ति' हमारे मन की ही उपज है। इस 'अहं वृत्ति' को ही आधार बनाकर समस्त व्यक्तित्व निर्मित होता है। अतः इस 'अहं वृत्ति' की गहराई में जाकर उस पर विचार करना चाहिए। यदि यह 'अहं वृत्ति' जिससे हम तादात्म्य को प्राप्त करके अपने आपको एक व्यक्ति मात्र समझ रहे हैं, जिसकी वजह से अपने सीमित होने का भान होता है, ऐसे कल्पित व्यक्तित्व को आधार बनाकर जीने के क्या दुष्परिणाम होते हैं, इसे बहुत अच्छी तरह देखना चाहिए। इसी स्तर पर खड़े रहने के उपरान्त खंड का अस्तित्व आता है, देशादि की सीमाओं के दायरे में आ जाते हैं, अपूर्णता एवं दीनता होती है। अतः इसे अच्छी तरह से समझ कर उसके सत्य के बारे में विचार करके देखना चाहिए। तब यह सीमित व्यक्तित्व को बाधित कर अपने सत्य स्वरूपता का ज्ञान होता है, जिससे किसी प्रकार की देश, काल या वस्तु की परिच्छिन्नता नहीं रह जाती है। समस्त संसार का आधार इस 'अहं वृत्ति' पर विचार ही एक मात्र मुक्ति का द्वार है। यदि 'मैं' वृत्ति काल्पनिक है, तो इस कल्पना का क्या आधार है।

अतः महर्षिजी बताते हैं कि अब यह सोचना चाहिए कि यह मैं वृत्ति का क्या सत्य है। प्रातः उठ़ने के साथ ही सर्व प्रथम 'मैं वृत्ति' ही सिर उठ़ाती है, तत्पश्चात् ही समस्त अन्यविषयक वृत्तियां आती हैं। किन्तु साथ ही यह भी ध्यान देने की बात है कि यह 'मैं वृत्ति' का अस्तित्व ही तब ही आता है, जब मन जगता है। मन के अभाव में 'मै वृत्ति' का भी अभाव होता है, एवं इस वृत्ति का भी उतना ही सत्य है, जितना कि अन्य विषयक वृत्तियों का। यह अहं विषयक विचार शास्त्र को आधार बनाकर, गुरु के चरणों में बैठ़कर उनके श्रीमुख से श्रवण करना चाहिए। जब इस पर गहराई से विचार होता है, तब यह एक आश्चर्यजनक तथ्य सामने आता है, कि यह अहंकार टिकता ही नहीं है। विचार के अभाव में ही यह अपने साम्राज्य को स्थापित करते हुए समस्त संसार को प्रसारित करता है। इस विचार का क्या स्वरूप होना चाहिए उसकी चर्चा आगे के श्लोक में की जाएगी।

अहं प्रत्यय का आधार कोई नित्य पदार्थ है, जो तीनों अवस्थाओं का साक्षी होकर भी पंचकोशातीत है। जो तीनों अवस्थाओं में बुद्धि और उसकी वृत्तियों के होने और न होने को अहंभाव से स्थित होकर जानता है। जो बुद्धि आदि को प्रकाशित करता है पर वह न देखा जा सकता है और न उसे बुद्धि आदि कोई प्रकाशित कर सकता है। जिसने सम्पूर्ण विश्व को व्याप्त किया हुआ है पर उसे कोई व्याप्त नहीं कर सकता। जिसके भासने पर यह आभास रूप सारा जगत भासित हो रहा है। जिसकी सन्निधि मात्र से देह, मन, बुद्धि आदि प्रेरित होकर अपने-अपने विषयों में वर्तते हैं। अहंकार से देह पर्यन्त और सुख आदि समस्त विषय जिस नित्य ज्ञान स्वरूप द्वारा घट के समान जाना जाता है। यही नित्य अखंडानन्द अनुभव रूप अन्तरात्मा पुराण पुरूष है। जो सदा एकरूप बोधमात्र है, जिसकी प्रेरणा से इन्द्रियां और प्राण चलते हैं। यह मन और अहंकार रूप विकारों का तथा देह, इन्द्रिय, प्राणों की क्रियाओं का ज्ञाता है तथा तपाये हुए लोहपिंड के समान उनका अनुवर्तन करता हुआ भी न कुछ चेष्टा करता है और न ही विकारों को प्राप्त होता है। यह शरीर के षड्विकारों से रहित, नित्य है और शरीर के लीन होने पर भी घट के टूटने पर घटाकाश के समान बगैर किसी चेष्टा के आकाशरूप हो जाता है। यह निर्विशेष परमात्मा सत् असत् सबको प्रकाशित करता हुआ, तीनों अवस्थाओं में अहंभाव से स्फुरित होता हुआ, बुद्धि के साक्षी रूप से साक्षात् विराजमान है।

इस आत्मा को संयत चित्त होकर, बुद्धि के प्रसन्न होने पर यह 'मैं हूं' ऐसा अपने अन्तःकरण में साक्षात् अनुभव कर, जन्म मरण रूपी तरंगों वाले इस अपार संसार सागर को पार कर, ब्रह्म रूप में स्थित होकर कृतार्थ हो जाएं।

'साक्षी' जीव का प्रकाशक है, इस तथ्य का भान बनाए रखना ही योग है।

जो सतबार पाठ़ की कोई। छूटहि बन्दि महासुख होई।।

***जो** कोई इस हनुमान-चालीसा का सौ बार पाठ़ करता है वह जन्म-जन्मान्तर के बन्धनों से मुक्त हो जाता है और मोक्ष रूप महासुख को प्राप्त करता है।*

गोस्वामीजी अन्त में इस स्तुति के पाठ़ आदि की फलश्रुति बताते हैं कि इस हनुमान चालीसा का सौ बार पाठ़ करने से जन्म जन्मान्तर के बन्धनों से मुक्त होकर महासुख की प्राप्ति होती है। गोस्वामीजी के इन वाक्यों पर श्रद्धा से युक्त होकर जो कोई भी पाठ़ करता है, तो निश्चित रूप से उसकी मनोकामना की पूर्ति हो जाती है। इसके अलावा इस पाठ़ का एक और विशेष प्रयोजन भी होता है।

भगवान गीता में बताते हैं कि मन जिस विषय का भी बार बार ध्यान करता है, उसके साथ आसक्ति होने लगती है तथा उसको पाने की इच्छा तीव्र हो जाती है (ध्यायतो विषयान्पुंसः संगस्तेषूपजायते।) इस ही सिद्धान्त के अनुरूप जो कोई भी इस स्तुति का बार बार पाठ़ करता है, तो उसके अन्दर सहज रूप से ही हनुमानजी का ज्यादा ध्यान होने लगता है। हनुमानजी का पूरा व्यक्तित्व मन में चित्रित होने लगता है और हनुमानजी के प्रति भक्ति जगने लगती है। इस भक्ति के प्रभाव से स्वाभाविक ही मन में हनुमानजी के गुणो का प्रभाव दृढ़ होने लगता है। मन उन रंगों में रंगता जाता है। हनुमानजी की छबि मनस-पटल पर एक आदर्श की तरह स्थापित हो जाती है। हनुमानजी की प्रभु के चरणों में निष्काम सेवा के भाव को आत्मसात् करने की प्रेरणा होने लगती है। निष्काम सेवा इतना दिव्य गुण होता है कि जो भी इसे जीने लगता है, वह महासुख को प्राप्त करता है, तथा फल की प्राप्ति की चिन्ता और उससे जनित रागादि रूप बन्धन से मुक्त होने लगता है। इस तरह अपने आदर्श स्वरूप हनुमानजी के रंग में रंगने की इच्छा तीव्र हो जाती है, और जो भी भक्त हनुमानजी के गुण, भक्ति और ज्ञान से युक्त हो जाता है, वह ही महासुख को प्राप्त करता है।

|| हनुमान चालीसा ||

महर्षि विश्वामित्र श्रीराम को धर्म-सेतु पालक की उपाधि प्रदान करते हैं। सेतु के अभाव में एक ही नदी के दो किनारों पर रहने वाले व्यक्ति एक-दूसरे से नहीं मिल पाते हैं। धारा का एक छोटा सा व्यवधान बड़ी दूरी बन जाता है। सारा समाज नदी के दो किनारों के समान विभक्त है। इसमें परस्पर दूरी है। यह दूरी प्रत्येक क्षेत्र में है - चाहे वह वर्णगत हो, आर्थिक हो अथवा बौद्धिक। स्वभावतः प्रत्येक वर्ग एक-दूसरे के प्रति संघर्षरत रहता है।

धर्म का मुख्य उद्देश्य समाज के प्रत्येक वर्ग और व्यक्ति को एक-दूसरे के निकट लाना है। वर्ण-व्यवस्था का प्रतिपादन करने वाला वैदिक मंत्र विराट् ब्रह्म के अंग रूप से ही सारे वर्णों का वर्णन करता है। शरीर के अंग पृथक् पृथक् होकर भी एक दूसरे के पूरक हैं, न कोई छोटा है और न कोई बड़ा। अपने कार्य को सम्पन्न करने वाला प्रत्येक अंग श्रेष्ठ है। शरीर में शीर्षस्थ नेत्र यदि ठीक से कार्य नहीं कर पा रहा है, और शोभा मात्र की वस्तु रह जाय तो उनकी तुलना में वह चरण श्रेष्ठ हैं, जो अपने कार्य का निर्वाह कर रहा है। इसी प्रकार धर्म भी सारे विश्व को विराट् ईश्वर से सम्बद्ध कर उसमें एकता के सूत्र को स्थापित करता है। धर्म एकत्व की सृष्टि करता है।

उपनिषद् में प्राण की उपासना विषयक चर्चा करते हुए उसकी महिमा स्थापित की गई है। इसके लिए एक प्रसंग प्राप्त होता है कि एक बार समस्त इन्द्रियों में अपनी श्रेष्ठता को लेकर लड़ाई हुई। तब इसके समाधान के लिए वे सब बृहस्पति के पास पहुंची। बृहस्पतिजी ने कहा कि प्रत्येक इन्द्रिय कुछ समय के लिए अपने गोलक को छोड़कर कहीं और जाए और जिसके भी बगैर शरीर की समस्त क्रियाएं रुक जाएं उनकी श्रेष्ठ़ता का निश्चय तुम लोग स्वतः ही हो जाएगा। इन्द्रियों ने यह बात मान ली और प्रत्येक ने एक-एक करके शरीर को छोड़कर जाने का निर्णय किया।

सर्व प्रथम चक्षु इन्द्रिय ने प्रस्थान किया, तब शरीर का समस्त कार्य उसी प्रकार चलता रहा, जैसे एक अन्धे व्यक्ति का जीवन चल जाता है। चक्षु ने जब यह देखा कि शरीर का कार्य तो आसानी से चल रहा है, तब वह शर्मिन्दा होकर अपने गोलक में आकर पुनः स्थित हो गई। तत्पश्चात् कर्ण इन्द्रिय ने प्रस्थान किया तब एक बहरे व्यक्ति के जीवन की तरह ही सब कार्य चलता रहा। इस प्रकार एक-एक करके सब इन्द्रियां गई और सब ने यह स्वीकार कर लिया कि हमारे बगैर भी जीवन चल सकता है। अन्त में प्राण ने कहा कि हम भी आजमां के देखें। जहां वह शरीर से बाहर निकलने लगा तो समस्त इन्द्रियां आदि चीखने लगी कि आप हमें छोड़कर मत जाईये, आपके बगैर हम नहीं रह सकेंगे। इस प्रकार इसके माध्यम से प्राण की ही श्रेष्ठता सिद्ध हो गई।

समस्त पसिस्थिति में प्रतिक्रिया के बगैर जीव का अवलोकन कर पाना ही वैराग्य है।

वेदान्त आश्रम, इन्दौर :- वेदान्त आश्रम, इन्दौर में प्रतिदिन पूज्य गुरुजी के द्वारा प्रातः ७.३० बजे से लक्ष्मीधर कवि कृत 'अद्वैत मकरंद' ग्रंथ पर प्रवचन चल रहे हैं। प्रातः ६.०० और सायं ७.०० बजे भगवान श्री गंगेश्वर महादेवजी की आरती होती है। सायं आरती के बाद भजन का कार्यक्रम होता है। प्रति सोमवार को गंगेश्वर महादेव का रुद्राभिषेक किया जाता है। इसके अलावा वेदान्त आश्रम गुरुकुल में अंग्रेजी भाषा में वेदान्त का संक्षिप्त कोर्स आरम्भ हुआ है। जिसमें पूज्य गुरुजी द्वारा 'वेदान्त सार' ग्रंथ का अध्ययन कराया जाता है, उसके अलावा गीता, संस्कृत तथा स्तोत्र-पाठ भी सिखाया जा रहा है।

वेदान्त आश्रम में १ से ५ मार्च तक शिव उपासना शिविर का आयोजन हुआ। इस शिविर में 'शिव अपराध क्षमापना स्तोत्र', 'शिव महिम्न स्तोत्र', स्तोत्र पारायण तथा संकीर्तन उसके अलावा भजन, भजनों की अन्ताक्षरी, प्रश्नोत्तर कार्यक्रम हुए। प्रतिदिन किसी न किसी भक्त के द्वारा शिवजी का रुद्राभिषेक किया गया।

मिशन समाचार

इस शिविर का समापन महाशिवरात्रि के दिन हुआ। इस पर्व पर दिन के दो प्रहर तथा रात्रि एक प्रहर को गंगेश्वर महादेवजी का वैदिक विधि से रुद्राभिषेक किया गया। इसके अलावा श्री गंगेश्वर महादेवजी की पौराणिक प्रसंग 'गंगावतरण' से सम्बद्ध मनमोहक झांकी सजाई गई। इसी दिन आश्रम में अध्ययन हेतु आई हुई रशियन साधिका की नैष्ठिक ब्रह्मचर्य दीक्षा सम्पन्न हुई तथा अब वे ब्रह्मचारिणी दिव्या चैतन्या के नाम से जानी जाएगी।

वेदान्त मिशन, लखनउः- वेदान्त मिशन, लखनउ द्वारा पूज्य गुरुजी के गीता ज्ञान यज्ञ का आयोजन दि. १३ से २० मार्च तक लखनउ में स्थित हरि ओम् मन्दिर में किया गया। इस यज्ञ के प्रातः के सत्र में पूज्य गुरुजी ने आद्य शंकराचार्यजी द्वारा रचित दृग्दृश्यविवेक पर तथा सायं के सत्र में गीता के चौदहवें अध्याय गुणत्रयविभाग योग पर प्रवचन किए। २० मार्च को प्रवचन के समापन के दिन हरि ओम् मन्दिर द्वारा समस्त साधकों के लिए भण्डारे का आयोजन किया गया। २१ मार्च को होली मिलन समारोह का आयोजन महानगर में स्थित श्री डी.एन. मिश्रजी के निवास पर किया गया। इस समारोह के अन्तर्गत प्रारम्भ में पूज्य गुरुजी ने होली का महत्व बताया तत्पश्चात् प्रश्नोत्तर, भजन तथा भण्डारे का आयोजन हुआ। पूज्य गुरुजी के द्वारा सब को व्यक्तिगत रूप से गुलाल का टीका लगाकर, फूल की पंखुडियां डालते हुए प्रभु के प्रेम में रंग में रंगकर फूलों की खुश्बू की तरह ज्ञान को प्रसारित करने का आशीर्वाद प्रदान किया गया।

गीता ज्ञान यज्ञ

(स्वामिनी अमितानन्दजी द्वारा)	(पूज्य गुरुजी द्वारा)
दिनांक – १४ अप्रैल से २१ अप्रैल	**दिनांक – २६ अप्रैल से २ मई**
समय – प्रातः ७. एवं सायं ६.३० बजे से	**समय – प्रातः एवं सायं ७ से ८.३०**
विषय – माण्डूक्य उपनिषद् (दूसरा अध्याय) एवं गीता अ – ७	**विषय – मुंडक उपनिषद्–२ एवं गीता अ – १४**
स्थान – स्वामी रामदास आश्रम, भावनगर	**स्थान – रामकृष्ण केन्द्र, अहमदाबाद**

साधना शिविर

प्रति वर्ष की तरह इस वर्ष स्वामी दयानन्द आश्रम ऋषीकेश में १८ से २४ जून'०८ तक साधना शिविर का आयोजन किया गया है। इच्छुक साधक शीघ्र वेदान्त मिशन अथवा वेदान्त पीयूष के कार्यालय में सम्पर्क करें।

—: शुभ कामनाओं सहित :—

1. Sh. P.H. Shah, Ahmedabad
2. M/S Punit Apparels Pvt. Ltd., Indore
3. M/S Samarpan Engg. & Mkt. Pvt. Ltd., Indore
4. Sh. Chandru Kukreja, Mumbai
5. M/S Pharmalab India Pvt. Ltd., Mumbai
6. M/S Elite Housing Developement Pvt. Ltd., Mumbai

-: वेदान्त पीयूष :-
स्वामी/मुद्रक/प्रकाशक/सम्पादक :- स्वामिनि अमितानन्द सरस्वती के लिये, तुलिका प्रिन्टिंग मन्दिर, ३४ ए ग्रीनलेण्ड कॉलोनी, स्नेहनगर, इन्दौर से मुद्रित एवं 'वेदान्त आश्रम', ई-२६४८.५० सुदामा नगर, इन्दौर से प्रकाशित।
सम्पादक :- स्वामिनि अमितानन्द सरस्वती Tel : 0731-2486055, 9302107229 ; E mail- info@vmission.org
आर.एन.आई. पंजीकरण संख्या – एम.पी/हिन्दी/२०००/१०६०६